अकबर-प्रतिबोधक युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि

[भँवरलाल नाहटा]

मणिधारीजी के स्वर्गवास के पचीस वर्ष पश्चात् आर्यावर्त्त अपनी स्वाधीनता खोकर यवन-शासन की दुर्दान्त चक्की में बुरी तरह से पिसा जाने लगा। उसके सहस्राब्दियों से संचित धर्म, संस्कृति, साहित्य और कला को अपार क्षति पहुँची। यदि समय-समय पर महापुरुषों ने जन्म लेकर अपने लोकोत्तर प्रभाव से जनता का मनोबल व चारित्रबल ऊंचा न उठाया होता तो जिस रूप में समाज विद्यमान है, कभी नहीं रहता। महापुरुषों का योगबल संसार की कल्याण-सिद्धि करता है।

वसतिमार्ग प्रकाशक श्री जिनेश्वरसूरिजी के पश्चात् क्रमशः उनकी पट्ट-परम्परा में जो भी महापुरुष हुए, वे क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्यादि प्रजा को प्रतिबोध देकर धार्मिक समाज का निर्माण करते गए, जिससे जैन समाज का गौरव बढ़ा। न केवल त्यागी वर्ग में ही उच्च चारित्र का प्रतिष्ठापन हुआ बल्कि जैन श्रावकों में भी अनेकों श्रेष्ठी, मंत्री, सेनापति आदि प्रभावशाली, धर्मप्राण और परोपकारी व्यक्ति हुए जिन्होंने देश और समाज की सेवा में अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर दिया। राज्य-शासन में समय-समय पर जैनाचार्यों व जैन गृहस्थों—श्रावकों का भी बड़ा भारी वर्चस्व रहा है। अपनी उदारता और प्रभाव के कारण जैनेतर समाज से जैन समाज की क्षति कम हुई और तीर्थ व धर्मरक्षा में शासकों से बड़ा भारी सहयोग भी मिलता रहा। चौदहवीं शताब्दी में तीसरे दादा श्री जिनकुशलसूरिजी और शासन-प्रभावक श्री जिनप्रभसूरिजी का जैन शासन पर बड़ा उपकार हुआ। उसी परम्परा में चतुर्थ दादा साहब श्री जिनचन्द्रसूरिजी हुए जो युगप्रधान महापुरुष थे। उन्होंने हजारों मुमुक्षुओं को शुद्ध चारित्र मार्ग के पथिक बनाये। धर्म-क्रान्ति करके जैन धर्म में आयी हुई विकृतियों का परिष्कार किया। अकबर, जहांगीर एवं हिन्दू राजा-महाराजाओं को अपने चारित्रबल से प्रभावित—प्रतिबोधित कर जैन शासन की महान् प्रभावना की। उन्हीं का संक्षिप्त परिचय यहां देना अभीष्ट है।

वीरप्रसू मारवाड़ के खेतसर गाँव में रीहड़ गोत्रीय ओसवाल श्रेष्ठी श्रीवन्तशाह को धर्मपत्नी श्रिया देवी की कुक्षि से सं० १५९५ चैत्र कृष्ण १२ के दिन आपने जन्म लिया। माता-पिता ने आपका गुणनिष्पन्न नाम 'सुलतान-कुमार' रखा जो आगे चलकर जैन समाज के सुलतान सम्राट हुए। बाल्यकाल में ही अनेक कलाओं के पारगामी हो गए विशेषतः पूर्व जन्म संस्कारवश धर्म की ओर आपका झुकाव अत्यधिक था।

सं० १६०४ में खरतरगच्छ नायक श्रीजिनमाणिक्यसूरि जी महाराज के पधारने पर उनके उपदेशों का आप पर बड़ा असर हुआ और आपकी वैराग्य-भावना से माता-पिता को दीक्षा लेने की आज्ञा प्रदान करने को विवश होना पड़ा। ९ वर्ष की आयु वाले सूलतान कुमार ने बड़े ही उल्लासपूर्वक संयम-मार्ग स्वीकार किया। गुरु महाराज ने आपका नाम 'सुमतिधीर' रखा। प्रतिभा-सम्पन्न और विलक्षण बुद्धि-शाली होने से आपने अल्पकाल में ही ग्यारह अंग आदि सकल शास्त्र पढ़ डाले तथा वाद-विवाद, व्याख्यान, कलादि में पारगामी होकर गुरु महाराज के साथ देश-विदेश में विचरण करने लगे।

उस समय जैन साधुओं में थोड़ा आचार-शैथिल्य का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रवेश हो चुका था जिसे परिहार कर क्रियोद्धार करने की भावना सभी गच्छनायकों में उत्पन्न हुई। श्रीजिनमाणिक्यसूरि जी महाराज ने भी दादासाहब श्रीजिनकुशलसूरिजी महाराज के स्वर्गवास से पवित्र तीर्थरूप देरावर की यात्रा करके गच्छ में फैले हुए शिथिलाचार को समूल नष्ट करने का संकल्प किया परन्तु भवितव्यता वश वे अपने विचारों को कार्य रूप में परिणत न कर सके और वहां से जेसलमेर आते हुए मार्ग में पिपासा परिषह उत्पन्न हो जाने से अनशन स्वीकार कर लिया। सन्ध्या के पश्चात् किसी पथिकादि के पास पानी की योगवाई भी मिली पर सूरिमहाराज अपने चिरकाल के चौविहार व्रत को भंग करने के लिए राजी नहीं हुए। उनका स्वर्गवास होने पर जब २४ शिष्य जेसलमेर पधारे तो गुरुभक्त रावल मालदेव ने स्वयं आचार्य-पदोत्सव की तैयारियाँ कीं और तत्र विराजित खरतरगच्छ के बेगड़ शाखा के प्रभावक आचार्य श्रीगुणप्रभसूरिजी महाराज से बड़े समारोह के साथ मिती भाद्रपद शुक्ल ९ गुरुवार के दिन सतरह वर्ष की आयु वाले श्री सुमतिधीरजी को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करवाया। गच्छ मर्यादानुसार आपका नाम श्री जिनचन्द्रसूरि प्रसिद्ध हुआ। उसी रात्रि में गुरु महाराज श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी ने दर्शन देकर समवशरण पुस्तिका स्थित स म्नाय सूरि-मन्त्रविधि निर्देश पत्र की ओर संकेत किया।

चातुर्मास पूर्ण कर आपश्री बीकानेर पधारे। मंत्री संग्रामसिंह बच्छावत की प्रबल प्रार्थना थी, अतः संघ के उपाश्रय में जहाँ तीन सौ यतिगण विद्यमान थे, चातुर्मास न कर सूरिजीमंत्रीश्वर की अश्वशाला में ही रहे। उनका युवक हृदय वैराग्यरस से ओत-प्रोत था। उन्होंने महान चिन्तन-मनन के पश्चात् क्रान्ति का मूल-मंत्र क्रिया-उद्धार की भावना को कार्यान्वित करना निश्चित किया।

मंत्री संग्रामसिंह का इस कार्य में पूर्ण सहयोग रहा, सूरि महाराज ने यतिजनों को आज्ञा दी कि जिन्हें शुद्ध साधु-मार्ग से प्रयोजन हो, वे हमारे साथ रहें और जो लोग असमर्थ हों, वे वेश त्यागकर गृहस्थ बन जावें। क्योंकि साधुवेश में अनाचार अक्षम्य है। सूरिजी के प्रबल पुरुषार्थ से ३०० यतियों में से सोलह व्यक्ति चन्द्रमा की सोलह कला रूप जिनचन्द्रसूरिजी के साथ हो गए। संयम पालन में असमर्थ अवशिष्ट लोगों को मस्तक पर पगड़ी धारण कराके 'मत्थेरण' गृहस्थ बनाया गया, जो महात्मा कहलाने लगे और अध्यापन, लेखन व चित्रकलादि का काम करके अपनी आजीविका चलाने लगे।

सूरिजी की क्रान्ति सफल हुई। यह क्रियोद्धार सं० १६१४ चैत्र कृष्ण ७ को हुआ। बीकानेर चातुर्मास के अनन्तर सं० १६१५ का चातुर्मास महेवानगर में किया और नाकोड़ा पार्श्वनाथ प्रभु के सान्निध्य में छम्मासी तपाराधन किया। तप जप के प्रभाव से आपकी योगशक्तियां विकसित होने लगीं। चातुर्मास के पश्चात् आप गुजरात की राजधानी पाटण पधारे। सं० १६१६ माघ सुदि ११ को बीकानेर से निकले हुए यात्री संघ ने, शत्रुञ्जय यात्रा से लौटते हुए पाटण में जंगमतीर्थ-सूरिमहाराज की चरण वन्दना की।

उन दिनों गुजरात में खरतरगच्छ का प्रभाव सर्वत्र विस्तृत था, पाटण तो खरतर विरुद प्राप्ति का और वसतिवास प्रकाश का आद्य-दुर्ग था। सूरि महाराज वहां चातुर्मास में विराजमान थे, उन्होंने पौषध विधिप्रकरण पर ३५५४ श्लोक परिमित विद्वत्तापूर्ण टीका रची, जिसे महोपाध्याय पुण्यसागर और वा० साधुकीर्ति गणि जैसे विद्वान गीतार्थों ने संशोधित की।

उस जमाने में तपागच्छ में धर्मसागर उपाध्याय एक कलहप्रिय और विद्वत्ताभिमानी व्यक्ति हुए, जिन्होंने जैन समाज में पारस्परिक द्वेष भाव वृद्धि करने वाले कतिपय ग्रन्थों की रचना करके शान्ति के समुद्र सदृश जैन समाज में द्वेष-वड़वाग्नि उत्पन्न की। उन्होंने सभी गच्छों के प्रति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषवमन किया और सुविहित शिरोमणि नवाङ्ग वृतिकर्त्ता अभयदेवसूरि खरतरगच्छ में नहीं हुए, खरतरगच्छ की उत्पत्ति बाद में हुई, यह गलत प्ररूपणा की; क्योंकि अभयदेवसूरि जी सर्वगच्छ मान्य महापुरुष थे और उन्हें खरतरगच्छ में हुए अमान्य करके ही वे अपनी चित्त-कालुष्यवृत्ति—खण्डनात्मक दुष्प्रवृत्ति की पूर्ति कर सकते थे।

जब उनकी यह दुष्प्रवृत्ति प्रकाश में आई तो श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने उसका प्रबल विरोध किया और धर्मसागर उपाध्याय को समस्त गच्छाचार्यों की उपस्थिति में कार्तिक सुदि ४ के दिन शास्त्रार्थ के लिये आह्वान किया। पर वे पंचासरापाड़ा की पोशाल में छिप बैठे। दूसरी बार कार्तिक सुदि ७ को फिर धर्मसागर को बुलाया पर उनके न आने पर चौरासी गच्छकेश्रीका-गीतार्थों के समक्ष अभयदेवसूरि के खरतरगच्छ में होने के विविध प्रमाणों सहित 'मतपत्र' लिखा गया और उसमें समस्त गच्छाचार्यों की सही कराके उत्सूत्रभाषी धर्मसागर को निह्नव प्रमाणित कर जैन संघ से बहिष्कृत कर दिया गया।

इस प्रकार पाटण में पुनः शास्त्रार्थ विजय की सुविहित पताका फहरा कर सूरिजी खंभात पधारे। सं० १६१८ का चातुर्मास करके सं० १६१९ में राजनगर-अहमदाबाद पधारे। यहां मंत्रीश्वर सारंगधर सत्यवादी के लाये हुए विद्वत्ताभिमानी भट्ट की समस्यापूर्ति कर उसे परास्त किया। सं० १६२० का चातुर्मास बीसलनगर और सं० १६२१ का चातुर्मास बीकानेर में किया। सं० १६२२ वै० शु० ३ को प्रतिष्ठा कराके चातुर्मास जेसलमेर किया। बीकानेर के मंत्री संग्रामसिंह ने नागौर के हसनकुलीखान पर सन्धि-विग्रह में जय प्राप्त कर सूरि महाराज का प्रवेशोत्सव कराया। सं० १६२२-२३ के चातुर्मास जेसलमेर में बिताकर खेतासर के चौपड़ा चांपसी-चांपलदे के पुत्र मानसिंह को मार्गशीर्ष कृ० ५ को दीक्षित किया। इनका नाम 'महिमराज' रखा, जो आगे चलकर सूरि महाराज के पट्टधर श्रीजिनसिंहसूरि नाम से प्रसिद्ध हुए।

सं० १६२४ का चौमासा नाडोलाई किया, मुगल सेना के भय से सभी नागरिक इतस्ततः नगर छोड़कर भागने लगे। सूरि महाराज उपाश्रय में निश्चल ध्यान में बैठे रहे, जिसके प्रभाव से मुगल सेना मार्ग भूलकर अन्यत्र चली गई। लोगों ने लौटकर सूरिजी के प्रत्यक्ष चमत्कार को देखकर भक्ति भाव से उनकी स्तवना की।

सं० १६२५ बापेऊ, १६२६ बीकानेर, सं० १६२७ का चातुर्मास महिम करके आगरा पधारे और सौरीपुर, चन्द्रवाड़, हस्तिनापुरादि तीर्थों की यात्रा की। सं० १६२८ का चातुर्मास आगरा कर १६२९ का रोहतक किया।

सं० १६३० के बीकानेर चातुर्मास में प्रतिष्ठा व व्रतोच्चारण आदि धर्म कृत्य हुए। सं० १६३१-३२ का चातुर्मास भी बीकानेर हुआ। सं० १६३३ में फलौधी पार्श्वनाथ तीर्थ के तालों को हाथ स्पर्श से खोल कर तीर्थ दर्शन किया। फिर जेसलमेर चातुर्मास कर गेली श्राविकादिको व्रतोच्चारण करवाये। तदनन्तर देरावर पधारे और कुशल गुरु के स्वर्गस्थान की यात्रा कर वहीं चातुर्मास किया। १६३५ जेसलमेर, सं० १६३६ बीकानेर, सं० १६३७ सेरूणा, सं० १६३८ बीकानेर सं० १६३९ जेसलमेर, सं० १६४० आसनीकोट में चातुर्मास करके जेसलमेर पधारे। माघ सुदी ५ को अपने शिष्य महिमराज जी को वाचक पद से अलंकृत किया। सं० १६४१ का चातुर्मास करके पाटण पधारे। सं० १६४२ का चातुर्मास कर शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त की। सं० १६४३ का चौमासा अहमदाबाद कर के धर्मसागर के उत्सूत्रात्मक ग्रन्थों का उच्छेद किया। सं० १६४४ में खंभात चातुर्मासकर अहमदाबाद पधारे संघपति सोमजी साह के संघ सहित शत्रुञ्जयादि तीर्थों की यात्रा की। सं० १६४५ सूरत, सं० १६४६ अहमदाबाद पधारे और विजयादशमी के दिन हाजापटेल की पोल स्थित शिवा सोमजी के शांतिनाथ जिनालय की प्रतिष्ठा बड़ी धूम-धाम से की। मन्दिर में ३१ पंक्तियों का शिलालेख लगा हुआ है एवं एक देहरी में संखवाल गोत्रीय श्रावकों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का लेख है। १६४७ में पाटण चौमासा किया श्राविका कोडां को व्रतोच्चारण करवाया। फिर अहमदाबाद होते हुए खंभात पधारे।

आपके त्याग-तपोमय जीवन और विद्वत्ता की सौरभ अकबर के दरबार तक जा पहुँची। अकबर ने मंत्री कर्मचन्द्र को आदेश देकर एवं सूरि महाराज को शीघ्र लाहौर पधारने के लिये फरमान भिजवाये। सूरिजी खंभात से अहमदाबाद पधारे। आषाढ़ सुदि १३ को लाहौर के लिए प्रस्थान कर महेशाणा, सिद्धपुर, पालनपुर होते हुए सीरोही के सुरतान देवड़ा की बीनति से सीरोही पधारे। पर्यूषण के ८ दिन सीरोही में बिताये। राव सुरतान ने पूर्णिमा के दिन जीवहिंसा निषिद्ध घोषित की। वहां से जालोर पधारे। बादशाह का फरमान आया कि आप चौमासे बाद शीघ्र पधारें पर शिष्यों को पहले ही लाहोर भेज दें। सूरजी ने महिमराज वाचक को ठा० ७ से लाहौर भेजा। सूरिजी चौमासा उतरने पर देछर, सराणा, भमराणी खांडप, द्रुणाडा, रोहीठ पधारे। इन सब नगरों में बड़े २ नगरों का संघ वंदनार्थ आया था। गुरुदेव पाली, सोजत, बीलाड़ा, जयतारण होते हुए मेड़ता पधारे। मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र के पुत्र भाग्यचन्द, लक्ष्मीचन्द्रने प्रवेशोत्सवादि किये। नागौर, बापेऊ, पड़िहारा, राजलदसेर, मालासर, रिणी, सरसा, कसूर होते हुए हापाणा पधारे। मंत्रीश्वर ने सूरिजी के लाहौर प्रवेश की बड़ी तैयारियाँ कीं। सं० १६४८ फा० शु० १२ के दिन ३१ साधुओं के परिवार सहित लाहौर जाकर बादशाह को धर्मोपदेश दिया। सम्राट, गुरु महाराज के प्रवचन से बड़ा प्रभावित हुआ और प्रतिदिन ड्योढी-महल में बुलाकर उपदेश श्रवण प्रारंभ किया। एकवार सम्राट ने गुरु महाराज के समक्ष एकसौ स्वर्ण मुद्राएँ भेंट रखी जिसे अस्वीकार करने पर उनकी निस्पृहता से वह बड़ा प्रभावित हुआ।

एकबार शाहजादा सलीम के मूल नक्षत्र में पुत्री उत्पन्न हुई तो ज्योतिषी लोगों ने उस पुत्री का जन्मयोग पिता के लिए अनिष्टकारी बतला कर नदी में प्रवाहित करने का फलादेश दिया। बादशाह ने इस हिंसामय कार्य को अनुचित जानकर जैनविधि से ग्रहशांति अनुष्ठान करने का मंत्री कर्मचन्द्र को आदेश दिया।

मंत्रीश्वर ने चैत्र सुदि १५ के दिन सोने चांदी के घड़ों से एक लाख के सद्व्यय से वाचक महिमराजजी के द्वारा सुपार्श्वनाथजी मन्दिर में शांति-स्नात्र करवाया। मंगलदीप और आरती के समय सम्राट और शाहजादा सलीम ने उपस्थित होकर दस हजार रुपये प्रभुभक्ति में भेंट किये। प्रभु का स्नात्रजल को अपने नेत्रों में लगाया तथा अन्तःपुर में भी भेजा। सम्राट अकबर सूरिमहाराज को "बड़े गुरु" नाम से पुकारता था, इससे उनकी इसी नाम से सर्वत्र प्रसिद्धि हो गई।

एकबार नौरंगखान द्वारा द्वारिका के जैन मन्दिरों के विनाश की वार्त्ता सुनी तो सूरिजी ने सम्राट को तीर्थ-माहात्म्य बतलाते हुए उनकी रक्षा का उपदेश दिया। सम्राट ने तत्काल फरमान पत्र लिखवाकर अपनी मुद्रा लगाके मंत्रीश्वर को समर्पित कर दिया, जिसमें लिखा था कि आज से समस्त जैन तीर्थ मन्त्री कर्मचन्द्र के अधीन हैं। गुजरात के सूबेदार आजमखान को तीर्थरक्षा के लिए सख्त हुक्म भेजा, जिससे शत्रुंजय तीर्थ पर म्लेच्छोपद्रव का निवारण हुआ।

एकबार काश्मीर विजय के निमित्त जाते हुए सम्राट ने सूरि महाराज को बुलाकर आशीर्वाद प्राप्त किया और आषाढ़ शुक्ला ९ से पूर्णिमा तक बारह सूबों में जीवों को अभयदान देने के लिए १२ फरमान लिख भेजे। इसके अनुकरण में अन्य सभी राजाओं ने भी अपने-अपने राज्यों में १० दिन, १५ दिन, २० दिन, महीना, दो महीना तक जीवों के अभयदान की उद्घोषणा कराई।

सम्राट ने अपने कश्मीर प्रवास में धर्मगोष्ठी व जीव-दया प्रचार के लिए वाचक महिमराज को भेजने की प्रार्थना की। मंत्रीश्वर और श्रावक वर्ग साथ में थे ही अतः सूरिजी ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाभ जानकर मुनि हर्षविशाल और पंचानन महात्मा आदि के साथ वाचकजी को भी भेजा। मिती श्रावण शुक्ल १३ को प्रथम प्रयाण राजा रामदास की वाड़ी में हुआ। उस समय सम्राट, सलीम तथा राजा, महाराजा और विद्वानों की एक विशाल सभा एकत्र हुई जिसमें सूरिजी को भी अपनी शिष्य-मण्डली सहित निमन्त्रित किया। इस सभा में समयसुन्दरजी ने 'राजानो ददते सौख्यं' वाक्य के १०२२४०७ अर्थ वाला अष्टलक्षी ग्रन्थ पढ़कर सुनाया। सम्राट ने उसे अपने हाथ में लेकर रचयिता को समर्पित करके प्रमाणीभूत घोषित किया।

कश्मीर जाते हुए रोहतासपुर में मंत्रीश्वर को शाही अन्तःपुर की रक्षा के लिए रुकना पड़ा। वाचकजी सम्राट के साथ में थे। उनके उपदेश से मार्गवर्ती तालाबों के जलचर जीवों का मारना निषिद्ध हुआ। कश्मीर के कठिन व पथरीले मार्ग में शीतादि परिषह सहते हुए पैदल चलने वाले वाचकजी की साधुचर्या का सम्राट के हृदय में गहरा प्रभाव पड़ा। विजय प्राप्त कर श्रीनगर आने पर वाचक जी के उपदेश से सम्राट ने आठ दिन तक अमारि उद्घोषणा करवाई।

सं० १६४९ के माघ में लाहोर लौटने पर सूरिजी ने साधुमंडली सहित जाकर सम्राट को आशीर्वाद दिया। सम्राट ने वाचक जी को कश्मीर प्रवास में निकट से देखा था अतः उनके गुणों की प्रशंसा करते हुए इन्हें आचार्य पद से विभूषित करने के लिए सूरिजी से निवेदन किया।

सूरिजी की सम्मति पाकर सम्राट ने मंत्री कर्मचन्द्र से कहा—वाचकजी सिंह के सदृश चारित्र-धर्म में दृढ़ हैं अतः उनका नाम 'सिंहसूरि' रखा जाय और बड़े गुरु महाराज के लिए ऐसा कौन सा सर्वोच्च पद है जो तुम्हारे धर्मानुसार उन्हें दिया जाय। कर्मचन्द्र ने जिनदत्तसूरि जी का जीवनवृत्त बताया और उनके देवता प्रदत्त युगप्रधान पद से प्रभावित होकर अकबर ने सूरिजी को 'युगप्रधान' घोषित करते हुए जैन धर्म की विधि के अनुसार उत्सव करने की आज्ञा दी। कर्मचन्द्रने राजा रायसिंहजी की अनुमति पाकर संघ को एकत्र किया और संघ-आज्ञा प्राप्त कर फाल्गुण कृष्ण १० से अष्टाह्निका महोत्सव प्रारम्भ किया और फाल्गुन शुक्ल २ के दिन मध्याह्न में श्री जिनसिंहसूरि का आचार्य पद, वा० जयसोम और रत्ननिधान को उपाध्याय पद एवं पं० गुणविनय व समयसुन्दर को वाचनाचार्य पद से अलंकृत किया गया। यह उत्सव संखवाल साधुदेव के बनाये हुए खरतर गच्छोपाश्रय में हुआ। मन्त्रीश्वर ने दिल खोलकर अपार धन राशि व्यय की। सम्राट ने लाहोर में तो अमारि उद्घोषणा की ही पर सूरिजी के उपदेश से खंभात के समुद्र के असंख्य जलचर जीवों को भी वर्षावधि अभयदान देने का फरमान जारी किया। "युगप्रधान" गुरु के नाम पर मंत्रीश्वर ने सवा करोड़ का दान किया। सम्राट के सन्मुख भी दस हजार रुपये, १० हाथी, १२ घोड़े और २७ तुक्कस भेंट रखे जिसमें से सम्राट ने मंगल के निमित्त केवल १ रुपया स्वीकार किया। सूरिमहाराज ने बोहित्थ संतति को पाक्षिक, चातुर्मासिक, व सांवत्सरिक पर्वों में जयतिहुअण बोलने का व श्रीमालों को प्रतिक्रमण में स्तुति बोलने का आदेश दिया। राजा रायसिंहजी ने कितने ही आगमादि ग्रन्थ सूरिमहाराज को समर्पण किये जिन्हें बीकानेर ज्ञानभण्डार में रखा गया।

सूरिजी लाहोर में धर्म-प्रभावना कर हापाणा पधारे और सं० १६५० का चातुर्मास किया। एक दिन रात्रि के समय चोर उपाश्रय में आये पर साधुओं के पास क्या रखा था? बीकानेर ज्ञानभण्डार के लिए प्राप्त ग्रन्थादि चुरा कर चोर जाने लगे तो सूरिजी के तपोबल से वे अन्धे हो गये और पुस्तकें वापस आ गई। सम्राट के पास लाहौर में जयसोमोपाध्यायादि चातुर्मास स्थित थे ही, सूरि महाराज ने लाहोर आकर सं० १६५१ का चातुर्मास किया जिससे अकबर को निरन्तर धर्मोपदेश मिलता रहा। अनेक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिलालेखादि से प्रमाणित है कि सूरि महाराज के उपदेश से सम्राट ने सब मिलाकर वर्ष में छः महीने अपने राज्य में जीवहिंसा निषिद्ध की तथा सर्वत्र गोबध बंद कर गोरक्षा की और शत्रुञ्जय तीर्थ को करमुक्त किया।

जहांगीर की आत्मजीवनी, डा० विन्सेण्ट ए० स्मिथ, पुर्तगाली पादरी पिनहेरो व प्रो० ईश्वरीप्रसाद आदि के उल्लेखों से स्पष्ट है कि सूरिजी आदि के सम्पर्क में आकर अकबर बड़ा दयालु हो गया था। सम्राट के दरबारी व्यक्ति अबुलफजल, आजमखान, खानखाना इत्यादि पर भी सूरिजी का बड़ा प्रभाव था। धर्मसागर उपाध्याय के ग्रन्थ, जो कई बार अप्रमाणित ठहराये जा चुके थे, फिर प्रवचन-परीक्षा ग्रन्थ का विवाद छिड़ा जिसे अबुलफजल की सही से निकाले हुए शाही फरमान से निराकृत किया जाना प्रमाणित है।

सम्राट ने सूरिजी से पंचनदी के पांच पीरों—देवों को वश में करने का आग्रह किया क्योंकि जिनदत्तसूरि के कथा प्रसंग से वह प्रभावित था। सूरिजी सं० १६५२ का चातुर्मास हापाणा करके मुलतान पधारे और चन्द्रवेलि पत्तन जाकर पंचनदी के संगम स्थान में आयंबिल व अष्टमतप पूर्वक पहुँचे।

सूरिजी के ध्यान में निश्चल होते ही नौका भी निश्चल हो गई। उनके सूरि-मंत्रजाप और सद्गुणों से आकृष्ट होकर पांचनदी के पांच पीर, मणिभद्र यक्ष, खोड़िया क्षेत्रपालादि सेवा में उपस्थित हो गये और उन्हें धर्मोन्नति-शासन प्रभावना में सहाय्य करने का वचन दिया।

सूरिजी प्रातःकाल चन्द्रवेलि पत्तन पधारे। घोरवाड़ साह नानिग के पुत्र राजपाल ने उत्सव किया। वहां से उच्चनगर होते हुए देरावर पधारे और दादा साहब श्री जिनकुशलसूरिजी के स्वर्ग-स्थान की चरण-वंदना की। तदनंतर श्री जिनमाणिक्यसूरिजी के निर्वाण-स्तूप और नवहर पुर पार्श्वनाथ की यात्रा कर जेसलमेर में सं० १६५३ का चातुर्मास किया, फिर अहमदाबाद आकर माघसुदि १० को धनासुतार की पोल में, शामला की पोल में और टेमला की पोल में बड़े समारोह से प्रतिष्ठा करवायी। सं० १६५४ में शत्रुंजय पधार कर मिती जेठ शु० ११ को मोटी-टुंक-विमल-वसही के सभा मण्डप में दादा श्री जिनदत्तसूरिजी एवं श्री जिनकुशलसूरि जी की चरणपादुकाएं प्रतिष्ठित कीं। वहां से आकर, अहमदाबाद में चातुर्मास किया। सं० १६५५ का चौमासा खंभात किया। सम्राट अकबर ने बुरहानपुर में सूरिजी को स्मरण किया। फिर ईडर इत्यादि विचरते हुए अहमदाबाद आये। यहां मन्त्री कर्मचन्द का देहान्त हुआ। संवत् १६५७ पाटण चातुर्मास कर सीरोही पधारे, वहां माघ सुदि १० को प्रतिष्ठा की। सं० १६५८ खंभात, १६५९ अहमदाबाद, सं० १६६० पाटण, सं० १६६१ में महेवा चातुर्मास किया। मिती मि०कृ ५ को कांकरिया कम्मा के द्वारा प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख है। सं० १६६२ में बीकानेर पधारे। चैत्र कृष्ण ७ के दिन नाहटों की गवाड़ स्थित शत्रुञ्जयावतार आदिनाथ जिनालय की प्रतिष्ठा करवायी। सं० १६६३ का चातुर्मास बीकानेर में हुआ। सं० १६६४ बैशाख सुदि ७ को फिर बीकानेर में प्रतिष्ठा हुई। संभवतः यह प्रतिष्ठा महावीर स्वामी के मन्दिर की हुई थी।

सं १६६४ का चातुर्मास लवेरा में हुआ। जोधपुर से राजा सूरसिंह वन्दनार्थ आये। अपने राज्य में सर्वत्र सूरिजी का वाजित्रों में प्रवेश हो, इसके लिए परवाना जाहिर किया। सं० १६६५ में मेड़ता चातुर्मास बिताकर अहमदाबाद पधारे। सं १६६६ का चातुर्मास खंभात किया। सं १६६७ का चातुर्मास अहमदाबाद में करके सं १६६८ का चातुर्मास पाटण में किया।

इस समय एक ऐसी घटना हुई जिससे सूरिजी को वृद्धावस्था में भी सत्वर विहार करके आगरा आना पड़ा। बात यह थी कि जहांगीर का शासन था, उसने किसी यति के अनाचार से क्षुब्ध होकर सभी यति-साधुओं को आदेश दिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि वे गृहस्थ बन जांय अन्यथा उन्हें गिरफ्तार कर लिया जाय। इस आज्ञा से सर्वत्र खलबली मच गई। कोई देश देशान्तर गये और कई भूमिगृहों में छिप गए। इस समय जैन शासन में आपके सिवा कोई ऐसा प्रभावशाली नहीं था जो सम्राट के पास जाकर उसकी आज्ञा रद्द करवाये। आगरा संघ ने आपको पधार कर यह संकट दूर करने की प्रार्थना की। सूरिजी पाटण से आगरा आकर बादशाह से मिले और उसका हुक्म रद्द करवाके साधुओं का विहार खुला करवाया। सं० १६६६ का चौमासा आगरा किया। इस चोमासे में बादशाह से सूरिजी का अच्छा संपर्क रहा और शाही दरबार में भट्ट को शास्त्रार्थ में परास्तकर "सवाई युगप्रधान भट्टारक" नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की।

चातुर्मास के पश्चात् सूरिजी मेड़ता पधारे। बीलाड़ा के संघ की विनती से आपने बिलाड़ा चातुर्मास किया। आपके साथ सुमतिकल्लोल, पुण्यप्रधान, मुनिवल्लभ, अमीपाल आदि साधु थे। पर्यूषण के बाद ज्ञानोपयोग से अपना आयु शेष जान कर शिष्यों को हित-शिक्षा देकर अनशन कर लिया। चार प्रहर अनशन पाल कर आश्विन बदि २ के दिन स्वर्गधाम पधारे। आपकी अंत्येष्टि बाणगंगा के तट पर बड़े धूम धाम से की गई। अग्नि प्रज्वलित हुई और देखते-देखते आपकी पावन तपःपूत देह राख हो गई पर आपकी मुखवस्त्रिका नहीं जली। इस प्रकट चमत्कार को देख कर लोग चकित हो गए सूरिजी के अग्निसंस्कार स्थान में स्तूप बना कर चरण प्रतिष्ठा की गई। आपके पट्ट पर आचार्य श्रीजिनसिंहसूरि बैठे।

महान् प्रभावक होने से आप जैन समाज में चौथे दादाजी नाम से प्रसिद्ध हुए। आपके चरणपादुका, मूर्त्तियां जेसलमेर बीकानेर, मुलतान, खंभात, शत्रुंजय आदि अनेक स्थानों में प्रतिष्ठित हुई। सूरत, पाटण, अहमदाबाद भरौंच, भाइखला आदि गुजरात में अनेक जगह आपकी स्वर्ग-तिथि 'दादा दूज' कहलाती है और दादावाड़ियों में मेला भरता है।

सूरिजी के विशाल साधु-साध्वी समुदाय था। उन्होंने ४४ नंदि में दीक्षा दी थी, जिससे २००० साधुओं के समुदाय का अनुमान किया जा सकता है। इनके स्वयं के शिष्य ६५ थे। प्रशिष्य समयसुंदरजी जैसों के ४४ शिष्य थे। और इनके आज्ञानुवर्त्ती साधु सारे भारत में विचरते थे। आपने स्वयं राजस्थान में २६, गूजरात में २०, पंजाब में ५ और दिल्ली आगराके प्रदेश में ५ चातुर्मास किये थे।

उस समय खरतर गच्छ की और भी कई शाखाएं थीं जिनके आचार्य व साधु समुदाय सर्वत्र विचरता था। साध्वियों की संख्या साधुओं से अधिक होती है अतः समूचे खरतरगच्छ के साधुओं की संख्या उस समय पांच हजार से कम नहीं होगी।

आप स्वयं विद्वान थे और आपके साधु समुदाय ने जो महान् साहित्य सेवा की है इसका कुछ विवरण हमने "युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि" ग्रन्थ में स्वतंत्र प्रकरण में दिया है तथा आपके शिष्य-प्रशिष्य व आज्ञानुवर्त्ती साधुओं का भी यथाज्ञात विवरण दिया गया है। आपका भक्त श्रावक समुदाय भी बहुत ही उल्लेखयोग्य रहा है जिन्होंने मंदिर-मूर्त्ति निर्माण, संघयात्रा, ग्रन्थलेखन और शासन-प्रभावना में अपने न्यायोपर्जित द्रव्य का दिल खोल के उपयोग किया।

आपके भक्त श्रावकों में मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र उस समय के बहुत बड़े राजनीतिज्ञ, महान् दानी, धर्म-प्रिय एवं गुरु-भक्त थे, जिन्होंने जिनसिंहसूरि के पदोत्सव में सवा करोड़ का दान देकर एक अद्वितीय उदाहरण उपस्थित किया। उनके सम्बन्ध में जयसोम ने 'कर्मचन्द्र मंत्रिवंश प्रबन्ध' एवं उनके शिष्य गुणविनय ने उसपर वृत्ति तथा भाषा में रास की रचना कर अच्छा प्रकाश डाला है।

इसी प्रकार पोरवाड़ जातीय अहमदाबाद के संघपति सोमजी भी बड़े धर्म निष्ट थे। उन्होंने अहमदाबाद के कई पोलों में जैनमंदिरों के निर्माण के साथ-साथ शत्रुंजय का बड़ा संघ निकाला एवंव हां खरतर-वसहो में विशाल चौमुख जिनालय का निर्माण कराया, जिसकी प्रतिष्ठा उनके पुत्ररूपजी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ने श्रीजिनराजसूरिजी के करकमलों से बड़े धूमधाम से करवायी। सं० सोमजी की स्वधर्मी-भक्ति भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके व इनके रूपजी के सम्बन्ध में श्रीवल्लभ उपाध्याय ने एक प्रशस्ति काव्य की संस्कृत में रचना की है। खेद है कि वह पूर्ण रूप से उपलब्ध नहीं हो सका, प्राप्त अंश राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित हुआ है। कविवर समयसुन्दर ने भी भावपूर्ण सं० सोमजी वेलि की रचना की है।

सूरिजी के अन्य भक्त श्रावकों ने भी जिनशासन के उत्कर्ष में बड़ा योगदान दिया। बीकानेर के लिगा गोत्रीय सतीदास ने शत्रुंजय पर विमलवसही में "खरतर-जय-प्रासाद"-जिनालय निर्माण कराया एवं भत्ता तलहटी के सामने सती-वाव भी उन्हीं की बनवायी हुई है।

गिरनारजी पर दादा साहब की देहरी बनाकर गुरुदेवों के चरण विराजमान करनेवाले बोथरा परिवार व अन्य अनेक श्रावकों में लौद्रवा तीर्थोद्धारक थाहरूसाह, महेवा में जिनालय निर्माता कांकरिया कमा, जूठा कटारिया, मेडता के चौपड़ा आसकरण तथा बीकानेर, अहमदावाद आदि के अनेक धर्मप्रेमी श्रावकों का उल्लेख यहां सीमित स्थान में संभव नहीं।

यु० जिनचन्द्रसूरिजी को सम्राट अकबर ने जो अष्टाह्निका के अमारि का फरमान दिया था उसकी प्रतिकृति सामने दी जा रही है। इस फरमान का सारांश यह है कि – "शुभचिन्तक तपस्वी जिनचन्द्रसूरि खरतर हमारे पास रहते थे। जब उनकी भगवद्भक्ति प्रकट हुई तो हमने उनको बड़ी बादशाही की महरवानियों में मिला लिया और अपनी आम दया से हुक्म फरमा दिया कि आषाढ़ शुक्ल ९ से १५ तक कोई जीव न मारा जाय और न कोई आदमी किसी जानवर को सतावे। असल बात तो यह है— जब परमेश्वर ने आदमी के वास्ते भांति-भांति के

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि

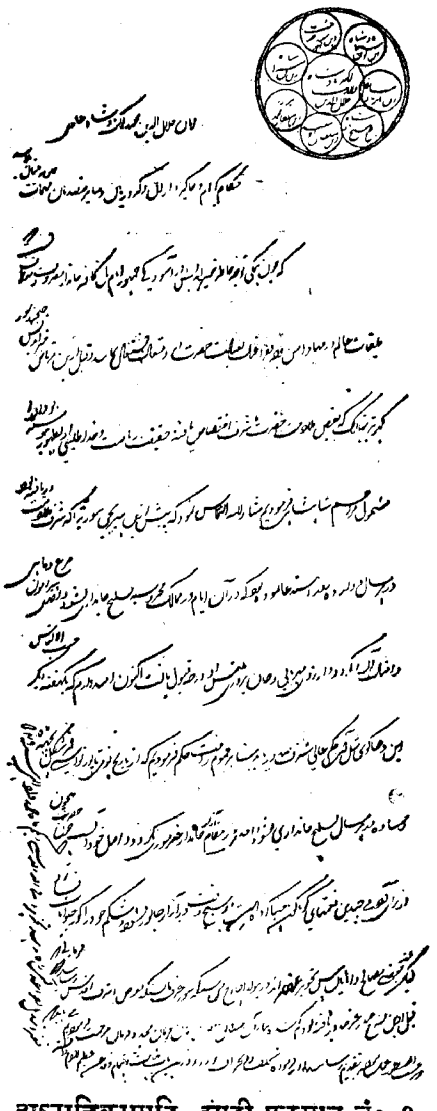

अष्टाह्निकामादि शाही फरमान नं० १

पदार्थ उपजाये हैं तब वह कभी किसी जानवर को दुख न दे और अपने पेट को पशुओं का मरघट न बनावे।"

"बड़े-बड़े हाकिम जागीरदार और मुसद्दी जान लें कि हमारी यही मानसिक इच्छा है कि सारे मनुष्यों और जीव-जन्तुओं को सुख मिले जिससे सब लोग अमन चैन से रह कर परमात्मा की आराधना में लगे रहें।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org